Impact Factor (SJIF): 6.092 E-ISSN: 2583-1615

International Journal of Research in Academic World

Received: 15/July/2024 IJRAW: 2024; 3(8):299-306 Accepted: 22/August/2024

क्या बाजार आधारित अर्थव्यवस्था सुशासन को सुदृढ़ करती है? संसाधन-अभाव, भ्रष्टाचार और सार्वजनिक प्रशासन का एक समालोचनात्मक विश्लेषण: भारत के संदर्भ में

[*1]Satpal Singh

[*1]Guest Faculty, University of Delhi, Delhi, India.

सारांश

सुशासन (Good Governance) की अवधारणा समकालीन लोक प्रशासन, सार्वजनिक नीति तथा विकास अध्ययन का एक केंद्रीय विषय बन चुकी है। सामान्यतः सुशासन को पारदर्शिता, जवाबदेही, विधि का शासन, सहभागिता, दक्षता और उत्तरदायित्व जैसे सिद्धांतों से जोड़ा जाता है। परंतु विकासशील देशों, विशेषकर भारत, के संदर्भ में एक मूलभूत प्रश्न अपेक्षाकृत कम चर्चा में आता है—क्या केवल प्रशासनिक सुधारों के माध्यम से सुशासन स्थापित किया जा सकता है, या संसाधनों के आवंटन की आर्थिक व्यवस्था भी इसकी सफलता को प्रभावित करती है?

भारत जैसे देश में जहाँ जनसंख्या निरंतर बढ़ रही है, संसाधन सीमित हैं तथा अनेक आवश्यक वस्तुओं और सेवाओं के वितरण में राज्य की महत्वपूर्ण भूमिका है, वहाँ संसाधनों की कमी, मूल्य-नियंत्रण, सब्सिडी आधारित वितरण तथा प्रशासनिक विवेकाधिकार कई बार भ्रष्टाचार, मध्यस्थता (Rent-seeking) और संसाधनों के दुरुपयोग की संभावनाएँ बढ़ा सकते हैं। दूसरी ओर बाजार आधारित व्यवस्था प्रतिस्पर्धा, मूल्य संकेत (Price Signals) और संसाधनों के तुलनात्मक रूप से अधिक दक्ष आवंटन का समर्थन करती है, किंतु इससे समानता, सामाजिक न्याय और सार्वभौमिक पहुँच जैसी नई चुनौतियाँ भी उत्पन्न हो सकती हैं।

यह अध्ययन राज्य-नियंत्रित एवं बाजार-आधारित संसाधन आवंटन प्रणालियों का सुशासन के संदर्भ में समालोचनात्मक विश्लेषण प्रस्तुत करता है। शोध का उद्देश्य किसी एक आर्थिक व्यवस्था को पूर्णतः श्रेष्ठ सिद्ध करना नहीं, बल्कि यह समझना है कि किन परिस्थितियों में कौन-सी व्यवस्था भ्रष्टाचार को कम करने, प्रशासनिक दक्षता बढ़ाने तथा नागरिकों को गुणवत्तापूर्ण सार्वजनिक सेवाएँ उपलब्ध कराने में अधिक प्रभावी सिद्ध होती है।

यह शोध गुणात्मक (Qualitative) पद्धति पर आधारित है तथा इसमें सार्वजनिक प्रशासन, राजनीतिक अर्थव्यवस्था, संस्थागत अर्थशास्त्र और सुशासन संबंधी प्रमुख सिद्धांतों का विश्लेषण किया जाएगा। साथ ही भारत में सार्वजनिक वितरण प्रणाली, प्रत्यक्ष लाभ अंतरण (DBT), जन औषधि, एलपीजी सब्सिडी तथा अन्य प्रमुख सरकारी कार्यक्रमों के अनुभवों का भी अध्ययन किया जाएगा। अध्ययन का उद्देश्य सुशासन और आर्थिक व्यवस्था के बीच संबंधों को अधिक व्यापक, संतुलित और सैद्धांतिक आधार पर समझना है।

मुख्य शब्द: सुशासन, बाजार आधारित अर्थव्यवस्था, सार्वजनिक प्रशासन, भ्रष्टाचार, संसाधन-अभाव, राजनीतिक अर्थव्यवस्था, भारत।

1. प्रस्तावना

बीसवीं शताब्दी के अंतिम दशक के बाद "सुशासन" (Good Governance) की अवधारणा वैश्विक सार्वजनिक नीति और प्रशासनिक सुधारों के केंद्र में आ गई। विश्व बैंक, संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम (UNDP), आर्थिक सहयोग एवं विकास संगठन (OECD) तथा अनेक अंतरराष्ट्रीय संस्थाओं ने विकास, लोकतंत्र और प्रशासनिक दक्षता के बीच गहरे संबंध को रेखांकित करते हुए सुशासन को आर्थिक एवं सामाजिक प्रगति की आवश्यक शर्त माना है। भारतीय संदर्भ में भी प्रशासनिक सुधार आयोगों, नीति आयोग तथा विभिन्न सरकारी सुधार कार्यक्रमों ने सुशासन को सार्वजनिक प्रशासन के मूल उद्देश्य के रूप में स्वीकार किया है।

परंपरागत रूप से सुशासन की चर्चा पारदर्शिता, जवाबदेही, नागरिक सहभागिता, विधि के शासन और प्रभावी प्रशासन जैसे आयामों तक सीमित रही है। किंतु यह अध्ययन एक भिन्न प्रश्न उठाता है—क्या सुशासन की सफलता केवल प्रशासनिक संरचना और संस्थागत सुधारों पर निर्भर करती है, या संसाधनों के आवंटन की आर्थिक व्यवस्था भी उतनी ही महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है?

भारत जैसे विकासशील देश में स्वास्थ्य, शिक्षा, खाद्यान्न, ऊर्जा, आवास, उर्वरक और सामाजिक सुरक्षा जैसी अनेक सेवाओं का बड़ा भाग राज्य द्वारा नियंत्रित या विनियमित किया जाता है। इन क्षेत्रों में सरकार नागरिकों को कम कीमत पर आवश्यक वस्तुएँ और सेवाएँ उपलब्ध कराने का प्रयास करती है। किंतु जब संसाधन सीमित हों,

*Corresponding Author: Satpal Singh

लाभार्थियों की संख्या अत्यधिक हो तथा प्रशासनिक क्षमता असमान हो, तब माँग और उपलब्धता के बीच अंतर उत्पन्न होता है। ऐसी परिस्थितियों में कतारें, प्राथमिकता, लाइसेंस, कोटा, विवेकाधिकार तथा मध्यस्थों की भूमिका बढ़ सकती है। राजनीतिक अर्थव्यवस्था का साहित्य संकेत देता है कि जहाँ कृत्रिम अभाव, एकाधिकार और विवेकाधिकार का संयोजन होता है, वहाँ Rent-seeking और भ्रष्टाचार की संभावनाएँ भी बढ़ जाती हैं।

दूसरी ओर बाजार आधारित व्यवस्था के समर्थकों का तर्क है कि प्रतिस्पर्धा, मूल्य-तंत्र और उपभोक्ता की पसंद संसाधनों के अधिक दक्ष आवंटन को संभव बनाते हैं, जिससे प्रशासनिक विवेकाधिकार कम होता है और भ्रष्टाचार के कुछ रूपों में कमी आ सकती है। इसके विपरीत आलोचकों का मत है कि पूर्णतः बाजार आधारित व्यवस्था सामाजिक असमानता को बढ़ा सकती है तथा गरीब और वंचित वर्गों की आवश्यक सेवाओं तक पहुँच सीमित कर सकती है। इस प्रकार राज्य और बाजार के बीच संबंध विरोध का नहीं, बल्कि संतुलन और पूरकता का भी प्रश्न है।

इसी संदर्भ में यह शोध एक केंद्रीय प्रश्न उठाता है—क्या सीमित संसाधनों और बढ़ती जनसंख्या वाले समाज में बाजार आधारित आर्थिक व्यवस्था सुशासन को अधिक प्रभावी बना सकती है, अथवा सुशासन के लिए राज्य और बाजार के बीच संतुलित व्यवस्था अधिक उपयुक्त है?

यह अध्ययन किसी वैचारिक निष्कर्ष को पूर्वनिर्धारित रूप से स्वीकार नहीं करता। इसके विपरीत यह सार्वजनिक प्रशासन, राजनीतिक अर्थव्यवस्था और संस्थागत सिद्धांतों के आधार पर दोनों व्यवस्थाओं की शक्तियों और सीमाओं का तुलनात्मक एवं समालोचनात्मक विश्लेषण प्रस्तुत करने का प्रयास करता है। भारत के अनुभवों के माध्यम से यह समझने का प्रयास किया जाएगा कि किन परिस्थितियों में राज्य-नियंत्रित हस्तक्षेप आवश्यक है, किन क्षेत्रों में बाजार की भूमिका अधिक प्रभावी हो सकती है, तथा सुशासन की दृष्टि से दोनों के बीच संतुलन किस प्रकार स्थापित किया जा सकता है।

2. साहित्य समीक्षा

2.1. सुशासन: अवधारणा और विकास

"सुशासन" (Good Governance) की अवधारणा 1990 के दशक में वैश्विक स्तर पर विशेष रूप से उभरकर सामने आई। World Bank ने इसे आर्थिक विकास, संस्थागत क्षमता और प्रभावी प्रशासन से जोड़ा, जबकि United Nations Development Programme (UNDP) ने इसे मानव विकास, सहभागिता, समानता, विधि के शासन, पारदर्शिता, उत्तरदायित्व तथा दक्षता जैसे मूल सिद्धांतों के आधार पर परिभाषित किया। बाद में Organisation for Economic Co-operation and Development (OECD) ने भी सार्वजनिक क्षेत्र में विश्वास, जवाबदेही और नीति-निर्माण की गुणवत्ता को सुशासन का महत्वपूर्ण आधार माना।

भारत में सुशासन की अवधारणा केवल प्रशासनिक दक्षता तक सीमित नहीं रही, बल्कि इसे नागरिक-केंद्रित शासन, सेवा वितरण, डिजिटल प्रशासन, पारदर्शिता तथा उत्तरदायी संस्थाओं से जोड़ा गया है। सूचना का अधिकार, प्रत्यक्ष लाभ अंतरण (DBT), ई-गवर्नेंस तथा सेवा गारंटी कानून जैसे अनेक सुधार इसी दिशा में किए गए।

हालाँकि अधिकांश अध्ययनों में सुशासन के प्रशासनिक एवं संस्थागत पक्ष पर अधिक बल दिया गया है, जबकि संसाधन आवंटन की आर्थिक संरचना और शासन के बीच संबंध अपेक्षाकृत कम अध्ययन का विषय रहा है।

2.2. संसाधन-अभाव और भ्रष्टाचार

भ्रष्टाचार पर उपलब्ध साहित्य में यह व्यापक रूप से स्वीकार किया गया है कि जहाँ संसाधन सीमित हों, निर्णय लेने का अधिकार कुछ व्यक्तियों या संस्थाओं में केंद्रित हो तथा जवाबदेही कमजोर हो, वहाँ भ्रष्टाचार की संभावना बढ़ जाती है।

Robert Klitgaard ने भ्रष्टाचार का प्रसिद्ध सूत्र प्रस्तुत किया:

$$\text{Corruption} = \text{Monopoly} + \text{Discretion} - \text{Accountability}$$

इस सिद्धांत के अनुसार यदि किसी संस्था के पास एकाधिकार (Monopoly), व्यापक विवेकाधिकार (Discretion) तथा सीमित जवाबदेही (Accountability) हो, तो भ्रष्टाचार की संभावना बढ़ जाती है।

Susan Rose-Ackerman ने भी अपने अध्ययनों में बताया कि लाइसेंस, परमिट, सब्सिडी तथा सरकारी नियंत्रण वाली व्यवस्थाओं में यदि संस्थागत पारदर्शिता पर्याप्त न हो, तो Rent-seeking तथा भ्रष्टाचार विकसित हो सकते हैं।

भारतीय संदर्भ में सार्वजनिक वितरण प्रणाली, लाइसेंस-परमिट व्यवस्था तथा कुछ सब्सिडी कार्यक्रमों पर हुए अध्ययनों ने भी यह संकेत दिया है कि कमजोर प्रशासनिक निगरानी के कारण संसाधनों का रिसाव (Leakage) और अ नियमितताएँ उत्पन्न हो सकती हैं। वहीं, आधार-आधारित सत्यापन और प्रत्यक्ष लाभ अंतरण जैसे सुधारों ने कुछ क्षेत्रों में इन समस्याओं को कम करने के संकेत भी दिए हैं।

2.3. राज्य-नियंत्रित बनाम बाजार-आधारित व्यवस्था

राजनीतिक अर्थव्यवस्था में राज्य और बाजार की भूमिका पर लंबे समय से बहस होती रही है।

Adam Smith ने प्रतिस्पर्धी बाजार को संसाधनों के कुशल आवंटन का महत्वपूर्ण माध्यम माना। बाद में Friedrich Hayek ने तर्क दिया कि मूल्य-तंत्र (Price Mechanism) समाज में बिखरी हुई सूचनाओं का सबसे प्रभावी उपयोग करता है और अत्यधिक केंद्रीकृत आर्थिक नियंत्रण कई बार संसाधनों के अक्षम उपयोग का कारण बन सकता है।

इसके विपरीत John Maynard Keynes ने यह प्रतिपादित किया कि अनेक परिस्थितियों में राज्य का हस्तक्षेप आवश्यक होता है, विशेषकर तब जब बाजार स्वयं सामाजिक न्याय, रोजगार या आवश्यक सेवाओं की सार्वभौमिक उपलब्धता सुनिश्चित न कर सके।

Amartya Sen ने विकास को केवल आय या बाजार दक्षता से नहीं, बल्कि नागरिकों की वास्तविक क्षमताओं (Capabilities) और अवसरों के विस्तार से जोड़ा। उनके अनुसार शिक्षा, स्वास्थ्य और सामाजिक सुरक्षा जैसे क्षेत्रों में राज्य की सक्रिय भूमिका लोकतांत्रिक विकास के लिए आवश्यक है।

इस प्रकार उपलब्ध साहित्य यह स्पष्ट करता है कि राज्य और बाजार को पूर्णतः परस्पर विरोधी संस्थाओं के रूप में नहीं देखा जा सकता। अधिकांश आधुनिक अर्थव्यवस्थाएँ दोनों के मिश्रित स्वरूप (Mixed Economy) पर आधारित हैं।

2.4. संस्थागत गुणवत्ता और सुशासन

Douglass North ने संस्थाओं को आर्थिक विकास और शासन की आधारशिला माना। उनके अनुसार औपचारिक नियम, अनौपचारिक मानदंड और संस्थागत संरचनाएँ आर्थिक व्यवहार तथा प्रशासनिक परिणामों को प्रभावित करती हैं।

Elinor Ostrom ने यह स्थापित किया कि सामुदायिक भागीदारी और स्थानीय संस्थाएँ अनेक परिस्थितियों में संसाधनों के प्रभावी एवं पारदर्शी प्रबंधन में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती हैं। इससे यह संकेत मिलता है कि सुशासन केवल राज्य या बाजार पर निर्भर नहीं करता, बल्कि संस्थागत डिज़ाइन और नागरिक सहभागिता भी समान रूप से महत्वपूर्ण हैं।

3. शोध-अंतर

उपलब्ध साहित्य के अध्ययन से स्पष्ट होता है कि सुशासन, भ्रष्टाचार, सार्वजनिक प्रशासन तथा बाजार आधारित अर्थव्यवस्था पर पर्याप्त शोध उपलब्ध है। अधिकांश अध्ययनों में इन विषयों का पृथक-पृथक विश्लेषण किया गया है। कुछ शोध प्रशासनिक सुधारों पर केंद्रित हैं, कुछ भ्रष्टाचार-नियंत्रण पर, जबकि अन्य आर्थिक उदारीकरण या बाजार सुधारों के प्रभावों का अध्ययन करते हैं।

किन्तु भारतीय संदर्भ में ऐसे अध्ययन अपेक्षाकृत कम हैं जो सीमित संसाधनों, बढ़ती जनसंख्या, संसाधन आवंटन की पद्धति और सुशासन के बीच अंतर्संबंध का समग्र विश्लेषण प्रस्तुत करें। विशेष रूप से यह प्रश्न अभी भी पर्याप्त रूप से अन्वेषित नहीं हुआ है कि क्या संसाधनों के वितरण की आर्थिक व्यवस्था—राज्य-नियंत्रित या बाजार-आधारित—भ्रष्टाचार, प्रशासनिक दक्षता और नागरिक-केंद्रित शासन को महत्वपूर्ण रूप से प्रभावित करती है।

यह शोध इसी अंतर को भरने का प्रयास करता है। अध्ययन किसी एक आर्थिक मॉडल को सर्वोत्तम सिद्ध करने के बजाय यह विश्लेषण करेगा कि भारत जैसे विकासशील लोकतंत्र में किन परिस्थितियों में राज्य-हस्तक्षेप आवश्यक है, किन क्षेत्रों में बाजार व्यवस्था दक्षता बढ़ा सकती है, और सुशासन की दृष्टि से दोनों के बीच किस प्रकार का संतुलन सबसे उपयुक्त हो सकता है।

4. शोध के उद्देश्य

प्रस्तुत अध्ययन का मुख्य उद्देश्य यह विश्लेषण करना है कि क्या बाजार आधारित आर्थिक व्यवस्था भारत जैसे विकासशील लोकतंत्र में सुशासन (Good Governance) को अधिक प्रभावी बना सकती है। इस व्यापक उद्देश्य की प्राप्ति हेतु निम्नलिखित विशिष्ट उद्देश्य निर्धारित किए गए हैं—

i). भारत में सुशासन की अवधारणा तथा उसके प्रमुख आयामों का अध्ययन करना।
ii). संसाधन-अभाव, जनसंख्या वृद्धि तथा सार्वजनिक सेवा वितरण के मध्य संबंध का विश्लेषण करना।
iii). यह अध्ययन करना कि संसाधनों की कमी और प्रशासनिक विवेकाधिकार भ्रष्टाचार को किस प्रकार प्रभावित करते हैं।
iv). राज्य-नियंत्रित तथा बाजार-आधारित संसाधन आवंटन व्यवस्थाओं की तुलनात्मक समीक्षा करना।
v). भारत में सार्वजनिक वितरण प्रणाली (PDS), प्रत्यक्ष लाभ अंतरण (DBT), जन औषधि, एलपीजी सब्सिडी तथा अन्य प्रमुख योजनाओं के संदर्भ में सुशासन के अनुभवों का विश्लेषण करना।
vi). सुशासन की दृष्टि से राज्य और बाजार के बीच संतुलित मॉडल के लिए नीतिगत सुझाव प्रस्तुत करना।

5. शोध प्रश्न

इस अध्ययन का प्रमुख शोध प्रश्न निम्नलिखित है—

क्या बाजार आधारित अर्थव्यवस्था सीमित संसाधनों की परिस्थितियों में भारत में सुशासन को अधिक प्रभावी बना सकती है?

इस मुख्य प्रश्न के उत्तर हेतु निम्नलिखित उप-प्रश्न निर्धारित किए गए हैं—

i). क्या सीमित संसाधन और बढ़ती जनसंख्या भ्रष्टाचार की संभावना को बढ़ाते हैं?
ii). क्या सरकारी नियंत्रण आधारित संसाधन वितरण में प्रशासनिक विवेकाधिकार भ्रष्टाचार को प्रभावित करता है?
iii). क्या बाजार आधारित व्यवस्था संसाधनों के अधिक दक्ष आवंटन में सहायक होती है?
iv). क्या पूर्णतः बाजार आधारित व्यवस्था सामाजिक न्याय और समान अवसरों की गारंटी दे सकती है?
v). भारत के अनुभवों से राज्य और बाजार के मध्य किस प्रकार का संतुलन अधिक उपयुक्त प्रतीत होता है?

6. शोध की परिकल्पनाएँ

यह अध्ययन मुख्यतः गुणात्मक (Qualitative) प्रकृति का है। अतः परिकल्पनाओं का उद्देश्य किसी अंतिम निष्कर्ष की पूर्वघोषणा करना नहीं, बल्कि विश्लेषण की दिशा निर्धारित करना है।

H_1: सीमित संसाधनों एवं बढ़ती जनसंख्या की परिस्थितियों में प्रशासनिक विवेकाधिकार बढ़ने पर भ्रष्टाचार की संभावना बढ़ती है।

H_2: प्रतिस्पर्धा एवं पारदर्शी मूल्य-तंत्र वाले क्षेत्रों में संसाधनों का आवंटन अपेक्षाकृत अधिक दक्ष हो सकता है।

H_3: शिक्षा, स्वास्थ्य तथा सामाजिक सुरक्षा जैसे क्षेत्रों में केवल बाजार आधारित व्यवस्था पर्याप्त नहीं होती; इन क्षेत्रों में राज्य की सक्रिय भूमिका आवश्यक बनी रहती है।

H_4: भारत में सुशासन के लिए पूर्ण राज्य-नियंत्रित अथवा पूर्ण बाजार-आधारित मॉडल की अपेक्षा एक संतुलित (Hybrid) व्यवस्था अधिक उपयुक्त हो सकती है।

7. सैद्धांतिक आधार

इस शोध का विश्लेषण पाँच प्रमुख सैद्धांतिक दृष्टिकोणों पर आधारित होगा।

7.1. नौकरशाही सिद्धांत

Max Weber के अनुसार आधुनिक प्रशासन विधिक-तर्कसंगत (Legal-Rational) व्यवस्था पर आधारित होना चाहिए। स्पष्ट नियम, पदानुक्रम, योग्यता-आधारित नियुक्ति तथा उत्तरदायित्व प्रशासनिक दक्षता के आधार हैं। किंतु यदि नियम अत्यधिक जटिल हो जाएँ या निर्णय लेने का विवेकाधिकार सीमित व्यक्तियों में केंद्रित हो जाए, तो प्रशासनिक विलंब और भ्रष्टाचार की संभावना बढ़ सकती है। इस शोध में वेबर का सिद्धांत सरकारी नियंत्रण आधारित व्यवस्थाओं की संस्थागत संरचना को समझने में सहायक होगा।

शोध से संबंध

यह अध्ययन यह विश्लेषण करेगा कि क्या प्रशासनिक संरचना की गुणवत्ता स्वयं सुशासन को प्रभावित करती है, या संसाधन आवंटन की आर्थिक व्यवस्था भी समान रूप से महत्वपूर्ण है।

7.2. भ्रष्टाचार सिद्धांत

Robert Klitgaard ने भ्रष्टाचार को समझाने के लिए एक प्रभावशाली विश्लेषणात्मक सूत्र प्रस्तुत किया—

$$\text{Corruption} = \text{Monopoly} + \text{Discretion} - \text{Accountability}$$

इस सिद्धांत के अनुसार यदि किसी संस्था के पास एकाधिकार हो, निर्णय लेने का व्यापक विवेकाधिकार हो तथा जवाबदेही कमजोर हो, तो भ्रष्टाचार की संभावना बढ़ जाती है।

शोध से संबंध

भारत में सार्वजनिक वितरण, लाइसेंस, सब्सिडी अथवा अन्य सरकारी योजनाओं का अध्ययन करते समय यह सिद्धांत विश्लेषण का एक प्रमुख आधार होगा।

7.3. संस्थागत सिद्धांत

Douglass North का मत है कि आर्थिक विकास और सुशासन का आधार केवल संसाधन नहीं, बल्कि संस्थाओं की गुणवत्ता होती है। यदि नियम स्पष्ट हों, अनुबंधों का पालन हो तथा संस्थाओं पर नागरिकों का विश्वास हो, तो शासन अधिक प्रभावी बनता है।

शोध से संबंध
यह अध्ययन संस्थागत गुणवत्ता, नीति-निर्माण और सेवा वितरण के मध्य संबंध का विश्लेषण करेगा।

7.4. बाजार व्यवस्था एवं ज्ञान सिद्धांत
Friedrich Hayek का तर्क था कि समाज में उपलब्ध जानकारी बिखरी हुई होती है। मूल्य-तंत्र (Price Mechanism) इस जानकारी को समाहित करके संसाधनों का अपेक्षाकृत दक्ष आवंटन करता है। अत्यधिक केंद्रीकृत आर्थिक नियंत्रण कई बार सूचना की कमी के कारण संसाधनों के अप्रभावी उपयोग का कारण बन सकता है।

शोध से संबंध
यह सिद्धांत इस प्रश्न का परीक्षण करने में सहायक होगा कि किन क्षेत्रों में बाजार-आधारित व्यवस्था प्रशासनिक दक्षता बढ़ा सकती है।

7.5. क्षमता दृष्टिकोण
Amartya Sen ने विकास को केवल आर्थिक वृद्धि से नहीं, बल्कि लोगों की वास्तविक स्वतंत्रताओं और क्षमताओं के विस्तार से जोड़ा। उनके अनुसार शिक्षा, स्वास्थ्य, पोषण और सामाजिक सुरक्षा जैसे क्षेत्रों में राज्य की महत्वपूर्ण भूमिका बनी रहती है।

शोध से संबंध
यह सिद्धांत शोध को संतुलित दृष्टिकोण प्रदान करेगा। इससे यह विश्लेषण संभव होगा कि जहाँ बाजार दक्षता बढ़ा सकता है, वहीं कुछ सार्वजनिक सेवाओं में राज्य का हस्तक्षेप सामाजिक न्याय और समावेशन के लिए क्यों आवश्यक है।

8. वैचारिक रूपरेखा
प्रस्तुत अध्ययन निम्नलिखित वैचारिक संबंधों की जाँच करेगा—

जनसंख्या वृद्धि → संसाधन-अभाव → संसाधन आवंटन की पद्धति (राज्य/बाजार) → प्रशासनिक विवेकाधिकार एवं प्रतिस्पर्धा → भ्रष्टाचार एवं प्रशासनिक दक्षता → सुशासन की गुणवत्ता

इस रूपरेखा के आधार पर भारत के विभिन्न सार्वजनिक सेवा क्षेत्रों का तुलनात्मक विश्लेषण किया जाएगा तथा यह समझने का प्रयास किया जाएगा कि सुशासन की दृष्टि से कौन-से संस्थागत और आर्थिक कारक अधिक निर्णायक सिद्ध होते हैं।

9. शोध पद्धति
9.1. शोध की प्रकृति
प्रस्तुत शोध गुणात्मक (Qualitative) एवं विश्लेषणात्मक (Analytical) प्रकृति का है। अध्ययन का उद्देश्य किसी आर्थिक व्यवस्था को पूर्णतः श्रेष्ठ या निम्न सिद्ध करना नहीं है, बल्कि यह विश्लेषण करना है कि भारत जैसे विकासशील लोकतांत्रिक देश में सीमित संसाधनों की परिस्थितियों में राज्य-नियंत्रित तथा बाजार-आधारित व्यवस्थाएँ सुशासन को किस प्रकार प्रभावित करती हैं।
यह शोध व्याख्यात्मक (Explanatory) तथा तुलनात्मक (Comparative) दृष्टिकोण पर आधारित है। अध्ययन में सार्वजनिक प्रशासन, राजनीतिक अर्थव्यवस्था तथा संस्थागत अर्थशास्त्र के सिद्धांतों का समन्वित उपयोग किया गया है।

9.2. अध्ययन के स्रोत
यह अध्ययन मुख्यतः द्वितीयक (Secondary) स्रोतों पर आधारित है। अध्ययन के लिए निम्नलिखित स्रोतों का उपयोग किया जाएगा—
i). राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय शोध-पत्र।
ii). शोध पुस्तकें एवं संदर्भ ग्रंथ।
iii). भारत सरकार की वार्षिक रिपोर्टें।
iv). नीति आयोग (NITI Aayog) की रिपोर्टें।
v). आर्थिक सर्वेक्षण (Economic Survey of India)।
vi). सार्वजनिक वितरण प्रणाली (PDS) तथा प्रत्यक्ष लाभ अंतरण (DBT) से संबंधित सरकारी दस्तावेज।
vii). विश्व बैंक, UNDP, OECD तथा Transparency International की रिपोर्टें।
viii). सहकर्मी-समीक्षित (Peer-reviewed) शोध-पत्र एवं जर्नल।

अध्ययन में प्रयुक्त सभी स्रोतों का संदर्भ APA (7th Edition) शैली के अनुसार दिया जाएगा।

9.3. अध्ययन की पद्धति
इस शोध में विषयवस्तु विश्लेषण (Content Analysis) तथा तुलनात्मक विश्लेषण (Comparative Analysis) की पद्धति अपनाई जाएगी।
विश्लेषण निम्न आधारों पर किया जाएगा—
- राज्य-नियंत्रित संसाधन वितरण की विशेषताएँ।
- बाजार आधारित संसाधन वितरण की विशेषताएँ।
- दोनों व्यवस्थाओं का भ्रष्टाचार पर प्रभाव।
- प्रशासनिक दक्षता पर प्रभाव।
- नागरिकों की पहुँच एवं समानता पर प्रभाव।
- सुशासन के विभिन्न आयामों पर प्रभाव।

9.4. अध्ययन का क्षेत्र
यह अध्ययन मुख्यतः भारत के संदर्भ में किया गया है। यद्यपि आवश्यकतानुसार कुछ अंतरराष्ट्रीय उदाहरणों का उल्लेख किया जाएगा, किन्तु शोध का प्रमुख फोकस भारतीय सार्वजनिक प्रशासन एवं शासन व्यवस्था रहेगा।
अध्ययन विशेष रूप से निम्नलिखित क्षेत्रों पर केंद्रित रहेगा—
- सार्वजनिक वितरण प्रणाली (PDS)
- प्रत्यक्ष लाभ अंतरण (Direct Benefit Transfer)
- जन औषधि योजना
- एलपीजी सब्सिडी सुधार
- डिजिटल शासन एवं ई-गवर्नेंस

इन कार्यक्रमों का चयन इसलिए किया गया है क्योंकि इनमें राज्य की सक्रिय भूमिका, सार्वजनिक संसाधनों का वितरण तथा प्रशासनिक सुधार—तीनों के तत्व स्पष्ट रूप से दिखाई देते हैं।

9.5. अध्ययन की सीमाएँ
प्रत्येक शोध की कुछ सीमाएँ होती हैं। प्रस्तुत अध्ययन की प्रमुख सीमाएँ निम्नलिखित हैं—
i). अध्ययन मुख्यतः द्वितीयक आँकड़ों पर आधारित है।
ii). सभी सरकारी योजनाओं का विस्तृत मूल्यांकन इस शोध के दायरे में संभव नहीं है।
iii). अध्ययन का उद्देश्य किसी राजनीतिक दल, सरकार अथवा आर्थिक विचारधारा का समर्थन या विरोध करना नहीं है।
iv). अध्ययन में प्रस्तुत निष्कर्ष उपलब्ध साहित्य, सार्वजनिक आँकड़ों तथा नीतिगत विश्लेषण पर आधारित होंगे।

इन सीमाओं के बावजूद अध्ययन का प्रयास रहेगा कि उपलब्ध साक्ष्यों के आधार पर संतुलित एवं वस्तुनिष्ठ निष्कर्ष प्रस्तुत किए जाएँ।

10. अध्ययन के लिए चयनित केस अध्ययन
शोध को व्यावहारिक एवं अनुभवजन्य आधार प्रदान करने के लिए

निम्नलिखित पाँच केस अध्ययन चुने गए हैं—

i). **सार्वजनिक वितरण प्रणाली:** यह अध्ययन करेगा कि खाद्यान्न वितरण में सरकारी नियंत्रण ने खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने में क्या भूमिका निभाई तथा किन कारणों से रिसाव (Leakages), फर्जी लाभार्थी, अनियमित वितरण और भ्रष्टाचार जैसी समस्याएँ उत्पन्न हुईं। साथ ही डिजिटल राशन कार्ड, आधार प्रमाणीकरण तथा 'वन नेशन, वन राशन कार्ड' जैसे सुधारों के प्रभाव का भी विश्लेषण किया जाएगा।

ii). **प्रत्यक्ष लाभ अंतरण:** यह केस अध्ययन यह समझने का प्रयास करेगा कि नकद अंतरण (Cash Transfer) तथा डिजिटल भुगतान प्रणाली ने मध्यस्थों की भूमिका, प्रशासनिक लागत और भ्रष्टाचार पर क्या प्रभाव डाला। साथ ही यह भी देखा जाएगा कि क्या DBT सभी वर्गों तक समान रूप से प्रभावी ढंग से पहुँच सका है।

iii). **एलपीजी सब्सिडी सुधार:** एलपीजी सब्सिडी को प्रत्यक्ष बैंक खातों में स्थानांतरित करने की व्यवस्था (PAHAL) को एक प्रशासनिक सुधार के रूप में देखा जाता है। इस अध्ययन में यह विश्लेषण किया जाएगा कि डिजिटल तकनीक और लक्षित सब्सिडी ने सुशासन तथा पारदर्शिता को किस सीमा तक मजबूत किया।

iv). **प्रधानमंत्री भारतीय जन औषधि परियोजना:** यह अध्ययन इस प्रश्न का परीक्षण करेगा कि आवश्यक दवाओं को कम कीमत पर उपलब्ध कराने के लिए सरकारी हस्तक्षेप और बाजार प्रतिस्पर्धा के बीच किस प्रकार का संतुलन स्थापित किया गया तथा इससे नागरिकों को क्या लाभ प्राप्त हुए।

v). **डिजिटल शासन:** ई-गवर्नेंस, ऑनलाइन सेवाएँ, डिजिटल भुगतान, सार्वजनिक सेवा पोर्टल तथा तकनीक आधारित निगरानी तंत्र के माध्यम से यह विश्लेषण किया जाएगा कि सूचना प्रौद्योगिकी ने प्रशासनिक पारदर्शिता, उत्तरदायित्व और सेवा वितरण में क्या परिवर्तन किए।

अध्याय का निष्कर्ष

प्रस्तुत शोध पद्धति अध्ययन को स्पष्ट दिशा प्रदान करती है। गुणात्मक विश्लेषण, द्वितीयक स्रोतों तथा चयनित केस अध्ययनों के माध्यम से यह शोध यह समझने का प्रयास करेगा कि भारत जैसे संसाधन-सीमित लोकतंत्र में सुशासन की स्थापना के लिए केवल प्रशासनिक सुधार पर्याप्त हैं अथवा संसाधनों के वितरण की आर्थिक व्यवस्था भी समान रूप से महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। अगले अध्याय में चयनित केस अध्ययनों का क्रमवार विश्लेषण प्रस्तुत किया जाएगा।

अध्याय–5
भारत में संसाधन-अभाव, सार्वजनिक वितरण प्रणाली और सुशासन: एक विश्लेषण

i). संसाधन-अभाव और सार्वजनिक प्रशासन

भारत विश्व के सर्वाधिक जनसंख्या वाले देशों में से एक है। तीव्र जनसंख्या वृद्धि, क्षेत्रीय असमानता, आय-विषमता तथा सीमित सार्वजनिक संसाधनों के कारण सरकार के समक्ष यह चुनौती रहती है कि आवश्यक वस्तुओं एवं सेवाओं का वितरण न्यायसंगत, पारदर्शी तथा प्रभावी ढंग से किया जाए। सार्वजनिक प्रशासन का मूल उद्देश्य केवल योजनाएँ बनाना नहीं, बल्कि यह सुनिश्चित करना भी है कि उनका लाभ वास्तविक लाभार्थियों तक समय पर पहुँचे।

सार्वजनिक प्रशासन के साहित्य में यह स्वीकार किया गया है कि जब किसी संसाधन की माँग उसकी उपलब्धता से अधिक होती है, तब राज्य को प्राथमिकताएँ निर्धारित करनी पड़ती हैं। ऐसी परिस्थितियों में लाइसेंस, कोटा, पात्रता, सब्सिडी तथा प्रशासनिक अनुमोदन जैसी व्यवस्थाएँ विकसित होती हैं। यदि इन व्यवस्थाओं में पारदर्शिता और जवाबदेही का अभाव हो, तो संसाधनों के दुरुपयोग तथा भ्रष्टाचार की संभावना बढ़ सकती है।

इस संदर्भ में यह समझना आवश्यक है कि भ्रष्टाचार केवल व्यक्तिगत नैतिक विफलता का परिणाम नहीं होता; कई बार वह संस्थागत संरचना, प्रोत्साहनों (Incentives) और संसाधन-अभाव से भी प्रभावित होता है। इसलिए सुशासन की चर्चा करते समय प्रशासनिक प्रक्रियाओं के साथ-साथ संसाधन आवंटन की प्रणाली का विश्लेषण भी आवश्यक हो जाता है।

ii). सार्वजनिक वितरण प्रणाली (PDS): उद्देश्य और आवश्यकता

भारत में सार्वजनिक वितरण प्रणाली (Public Distribution System - PDS) का उद्देश्य आर्थिक रूप से कमजोर वर्गों को आवश्यक खाद्यान्न रियायती दरों पर उपलब्ध कराना है। खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने, मूल्य स्थिरता बनाए रखने तथा गरीब परिवारों को न्यूनतम जीवन-निर्वाह उपलब्ध कराने में इस प्रणाली की महत्वपूर्ण भूमिका रही है।

समय के साथ इस व्यवस्था में अनेक सुधार किए गए, जिनमें लक्षित सार्वजनिक वितरण प्रणाली (Targeted PDS), राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा अधिनियम, आधार-आधारित प्रमाणीकरण तथा "वन नेशन, वन राशन कार्ड" जैसी पहलें उल्लेखनीय हैं। इन सुधारों का उद्देश्य वितरण प्रणाली को अधिक पारदर्शी, उत्तरदायी और नागरिक-केंद्रित बनाना था।

iii). संसाधन-अभाव और भ्रष्टाचार का संबंध

संसाधन-अभाव की स्थिति में यह आवश्यक नहीं कि भ्रष्टाचार स्वतः उत्पन्न हो, परंतु यदि संसाधनों का वितरण सीमित हो, निर्णय लेने का अधिकार कुछ अधिकारियों के पास केंद्रित हो तथा निगरानी तंत्र कमजोर हो, तो भ्रष्टाचार की संभावना बढ़ सकती है।

उदाहरण के लिए, यदि किसी क्षेत्र में आवश्यक वस्तुओं की उपलब्धता सीमित हो और उनका वितरण प्रशासनिक अनुमति पर निर्भर हो, तो कुछ लोग प्राथमिकता प्राप्त करने के लिए अनौपचारिक या अवैध माध्यमों का सहारा ले सकते हैं। इस प्रकार भ्रष्टाचार केवल व्यक्तिगत लालच का परिणाम नहीं, बल्कि कई बार संस्थागत संरचना और संसाधनों की कमी से उत्पन्न प्रोत्साहनों का भी परिणाम हो सकता है।

हालाँकि यह भी ध्यान देना आवश्यक है कि संसाधन-अभाव और भ्रष्टाचार के बीच संबंध सार्वभौमिक नहीं है। अनेक देशों ने सीमित संसाधनों के बावजूद प्रभावी संस्थागत व्यवस्था, डिजिटल निगरानी तथा कठोर जवाबदेही के माध्यम से भ्रष्टाचार पर नियंत्रण स्थापित किया है। इससे स्पष्ट होता है कि संसाधनों की कमी अपने-आप भ्रष्टाचार का कारण नहीं बनती; संस्थागत गुणवत्ता भी समान रूप से महत्वपूर्ण होती है।

iv). बाजार आधारित व्यवस्था: संभावित लाभ

बाजार आधारित व्यवस्था के समर्थकों का तर्क है कि प्रतिस्पर्धा, मूल्य-तंत्र तथा उपभोक्ता की पसंद संसाधनों के अधिक दक्ष आवंटन में सहायता करते हैं। यदि किसी वस्तु के उत्पादन और वितरण में अनेक उत्पादक एवं विक्रेता भाग लेते हैं, तो एकाधिकार की संभावना कम होती है और उपभोक्ता के पास विकल्प उपलब्ध रहते हैं।

प्रशासनिक दृष्टि से देखा जाए तो जहाँ सरकारी अनुमतियों, लाइसेंसों या वितरण संबंधी विवेकाधिकार में कमी आती है, वहाँ कुछ प्रकार के भ्रष्टाचार में भी कमी देखी जा सकती है। आर्थिक उदारीकरण के बाद भारत के दूरसंचार, विमानन तथा कुछ अन्य क्षेत्रों में प्रतिस्पर्धा बढ़ने से सेवा की उपलब्धता और गुणवत्ता में उल्लेखनीय सुधार हुए। यह अनुभव इस बात की ओर संकेत करता है कि कुछ क्षेत्रों में

बाजार व्यवस्था प्रशासनिक दक्षता को बढ़ा सकती है।
किन्तु बाजार व्यवस्था की अपनी सीमाएँ भी हैं। यदि आवश्यक सार्वजनिक सेवाएँ पूर्णतः बाजार पर छोड़ दी जाएँ, तो निम्न-आय वर्ग के नागरिकों की पहुँच प्रभावित हो सकती है। इसलिए केवल दक्षता को ही सुशासन का मापदंड नहीं माना जा सकता।

v). राज्य की भूमिका क्यों आवश्यक है?

भारत जैसे लोकतांत्रिक कल्याणकारी राज्य में शिक्षा, प्राथमिक स्वास्थ्य, पोषण, खाद्य सुरक्षा तथा सामाजिक सुरक्षा जैसे क्षेत्रों में राज्य की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण बनी रहती है। इन क्षेत्रों का उद्देश्य केवल आर्थिक दक्षता नहीं, बल्कि सामाजिक न्याय, समान अवसर और संवैधानिक दायित्वों की पूर्ति भी है।
इसलिए प्रश्न यह नहीं है कि "राज्य या बाजार" में कौन श्रेष्ठ है, बल्कि यह है कि किस क्षेत्र में किस व्यवस्था की भूमिका अधिक उपयुक्त है। जहाँ प्रतिस्पर्धा नागरिक हितों की रक्षा कर सकती है, वहाँ बाजार की भूमिका बढ़ाई जा सकती है; वहीं जहाँ सार्वभौमिक पहुँच और सामाजिक सुरक्षा आवश्यक हो, वहाँ राज्य का सक्रिय हस्तक्षेप अपरिहार्य हो सकता है।

vi). विश्लेषण

उपरोक्त चर्चा से स्पष्ट होता है कि सुशासन का संबंध केवल प्रशासनिक सुधारों से नहीं है। संसाधनों की उपलब्धता, संस्थागत गुणवत्ता, जवाबदेही, तकनीकी नवाचार तथा आर्थिक व्यवस्था—सभी मिलकर शासन की प्रभावशीलता को प्रभावित करते हैं।
भारत के अनुभव यह संकेत देते हैं कि जहाँ डिजिटल तकनीक, पारदर्शी लाभार्थी पहचान और प्रत्यक्ष लाभ अंतरण जैसे सुधार लागू किए गए, वहाँ कई योजनाओं में प्रशासनिक दक्षता बढ़ी और रिसाव में कमी आई। दूसरी ओर जिन क्षेत्रों में अत्यधिक विवेकाधिकार, जटिल प्रक्रियाएँ और सीमित निगरानी बनी रही, वहाँ भ्रष्टाचार की चुनौतियाँ भी बनी रहीं।
अतः यह कहा जा सकता है कि सुशासन का आधार केवल बाजार या केवल राज्य नहीं, बल्कि ऐसी संस्थागत व्यवस्था है जो प्रतिस्पर्धा, पारदर्शिता, जवाबदेही और सामाजिक न्याय के बीच संतुलन स्थापित कर सके।

अध्याय 6: प्रत्यक्ष लाभ अंतरण (DBT), डिजिटल गवर्नेंस और सुशासन

i). DBT लागू करने की पृष्ठभूमि और इसके उद्देश्य

पारंपरिक कल्याणकारी योजनाओं में धन का हस्तांतरण कई प्रशासनिक परतों से होकर गुजरता था, जिससे देरी और भ्रष्टाचार की संभावना बनी रहती थी। डिजिटल गवर्नेंस के इस दौर में, शासन को अधिक कुशल और पारदर्शी बनाने के लिए 1 जनवरी 2013 को प्रत्यक्ष लाभ अंतरण (Direct Benefit Transfer - DBT) तंत्र की शुरुआत की गई।
इसका मुख्य उद्देश्य सरकारी सहायता, सब्सिडी या लाभ को बिना किसी बिचौलिए के सीधे लाभार्थियों के बैंक खातों में स्थानांतरित करना है। इसके उद्देश्यों में निम्नलिखित शामिल हैं:

- वित्तीय समावेशन को बढ़ावा देना।
- नकली और डुप्लिकेट लाभार्थियों (Ghost Beneficiaries) को हटाना।
- धन के रिसाव (Leakage) को रोकना।
- सरकारी योजनाओं के क्रियान्वयन में गति और सटीकता लाना।

ii). DBT से पहले की चुनौतियाँ बनाम बाद के प्रमुख परिवर्तन

DBT के लागू होने से पहले, भारतीय लोक कल्याणकारी व्यवस्था कई गंभीर समस्याओं से जूझ रही थी। DBT से पहले की मुख्य चुनौतियों में प्रशासनिक अकुशलता, लाभार्थियों की पहचान में त्रुटि, कागजी कार्रवाई में अत्यधिक समय लगना और बिचौलियों द्वारा धन का गबन शामिल थे।
DBT के बाद आए प्रमुख परिवर्तनों ने पूरी व्यवस्था को बदल दिया:

- **सटीक पहचान:** 'JAM ट्रिनिटी' (जनधन, मोबाइल और बायोमेट्रिक/डिजिटल पहचान) के एकीकरण से वास्तविक लाभार्थियों की पहचान आसान हुई।
- **वित्तीय बचत:** नकली लाभार्थियों के हटने से सरकार को राजकोषीय रिसाव को रोकने में मदद मिली और अरबों रुपयों की बचत हुई।
- **समय की बचत:** प्रशासनिक परतों के हटने से पैसा सीधे और तुरंत लाभार्थी के खाते में पहुंचने लगा।

iii). DBT और भ्रष्टाचार के बीच संबंध

DBT ने लोक प्रशासन में भ्रष्टाचार के खिलाफ एक मजबूत हथियार के रूप में काम किया है। बिचौलियों की भूमिका को समाप्त करके, इसने "किराया मांगना" (Rent-seeking behavior) और रिश्वतखोरी की गुंजाइश को काफी हद तक कम कर दिया है। पूर्व में जहां कल्याणकारी कोष का एक बड़ा हिस्सा जमीन पर पहुंचने से पहले ही गायब हो जाता था, वहीं DBT ने यह सुनिश्चित किया है कि केंद्र या राज्य से जारी किया गया ₹1 सीधे लाभार्थी के खाते में ₹1 बनकर ही पहुंचे। इसने भ्रष्टाचार के विकेंद्रीकृत नेटवर्क को कमजोर किया है।

iv). सुशासन (Good Governance) के सिद्धांतों के संदर्भ में विश्लेषण

DBT केवल एक तकनीकी उपकरण नहीं है, बल्कि यह सुशासन के मूल स्तंभों को सुदृढ़ करने का एक माध्यम है:

- **पारदर्शिता:** धन के प्रवाह का हर एक चरण डिजिटल रूप से ट्रैक किया जा सकता है। इससे यह स्पष्ट रहता है कि कब, किसे और कितना लाभ दिया गया।
- **जवाबदेही:** डिजिटल रिकॉर्ड के कारण विसंगतियों के लिए अधिकारियों को सीधे जवाबदेह ठहराया जा सकता है। ऑडिटिंग की प्रक्रिया अब अधिक सरल और सटीक हो गई है।
- **दक्षता:** प्रशासनिक लागत में भारी कमी आई है। कम से कम जनशक्ति के साथ, अधिकतम लोगों तक त्वरित लाभ पहुंचाया जा रहा है।
- **समावेशन:** बैंकिंग प्रणाली से दूर सुदूर ग्रामीण क्षेत्रों के नागरिकों को मुख्यधारा की अर्थव्यवस्था से जोड़ा गया है, जिससे वित्तीय और सामाजिक समावेशन सुनिश्चित हुआ है।

v). DBT की सीमाएँ (चुनौतियाँ)

अभूतपूर्व सफलताओं के बावजूद, DBT प्रणाली पूरी तरह कमियों से मुक्त नहीं है। इसके शोधपरक अध्ययन के लिए इसकी सीमाओं को समझना आवश्यक है:

- **डिजिटल और बुनियादी ढांचे की कमी:** ग्रामीण और जनजातीय क्षेत्रों में कमजोर इंटरनेट कनेक्टिविटी और बिजली की समस्या।
- **डिजिटल निरक्षरता:** लाभार्थियों का एक बड़ा वर्ग आज भी एटीएम, मोबाइल बैंकिंग या डिजिटल भुगतान प्रणालियों को समझने में असमर्थ है।
- **तकनीकी विफलता:** बायोमेट्रिक मिलान न होना (विशेषकर वृद्धों या शारीरिक श्रम करने वालों में) या बैंक खातों का आधार से लिंक न होने के कारण कई बार पात्र लोग लाभ से वंचित रह जाते हैं।
- **अंतिम मील की कनेक्टिविटी:** गांवों में बैंकों या बैंकिंग कॉरेस्पोंडेंट्स (BCs) की कमी के कारण पैसा निकालने के लिए लोगों को आज भी लंबी दूरी तय करनी पड़ती है।

अध्याय का निष्कर्ष

निष्कर्षतः, प्रत्यक्ष लाभ अंतरण (DBT) ने भारत में डिजिटल गवर्नेंस और सुशासन के एक नए युग का सूत्रपात किया है। इसने न केवल प्रशासनिक रिसाव और भ्रष्टाचार को नियंत्रित किया है, बल्कि राज्य और नागरिकों के बीच विश्वास को भी मजबूत किया है। हालांकि, इसकी पूर्ण सफलता इस बात पर निर्भर करेगी कि हम डिजिटल विभाजन (Digital Divide) को कितनी जल्दी पाट पाते हैं और अंतिम छोर पर खड़े व्यक्ति के लिए तकनीकी बाधाओं को कितना सरल बना पाते हैं। यह विषय समकालीन लोक नीति और सुशासन के शोध के लिए अत्यंत प्रासंगिक और व्यापक है।

11. निष्कर्ष

प्रस्तुत अध्ययन का उद्देश्य यह विश्लेषण करना था कि क्या बाजार आधारित अर्थव्यवस्था भारत जैसे विकासशील लोकतंत्र में सुशासन को सुदृढ़ करने का प्रभावी माध्यम बन सकती है। उपलब्ध साहित्य, सैद्धांतिक दृष्टिकोणों तथा भारतीय सार्वजनिक नीतियों के विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि सुशासन का प्रश्न केवल प्रशासनिक सुधारों तक सीमित नहीं है, बल्कि यह संसाधनों की उपलब्धता, संस्थागत क्षमता, नीति-निर्माण, आर्थिक व्यवस्था तथा नागरिकों की भागीदारी से भी गहराई से जुड़ा हुआ है।

अध्ययन से यह संकेत मिलता है कि सीमित संसाधनों और बढ़ती जनसंख्या की परिस्थितियों में यदि संसाधनों का वितरण अत्यधिक केंद्रीकृत हो, प्रशासनिक विवेकाधिकार अधिक हो तथा पारदर्शिता और जवाबदेही कमजोर हो, तो भ्रष्टाचार की संभावना बढ़ सकती है। दूसरी ओर, जहाँ प्रतिस्पर्धा, डिजिटल तकनीक, स्पष्ट नियम और प्रभावी निगरानी उपलब्ध हो, वहाँ संसाधनों का वितरण अपेक्षाकृत अधिक पारदर्शी और दक्ष हो सकता है।

हालाँकि यह निष्कर्ष निकालना उचित नहीं होगा कि बाजार आधारित अर्थव्यवस्था प्रत्येक परिस्थिति में राज्य-नियंत्रित व्यवस्था से श्रेष्ठ है। भारत जैसे सामाजिक-आर्थिक रूप से विविध देश में शिक्षा, सार्वजनिक स्वास्थ्य, खाद्य सुरक्षा, पोषण तथा सामाजिक सुरक्षा जैसे क्षेत्रों में राज्य की सक्रिय भूमिका अपरिहार्य बनी रहती है। इसके विपरीत दूरसंचार, डिजिटल सेवाओं, कुछ उपभोक्ता बाजारों तथा प्रतिस्पर्धात्मक क्षेत्रों में बाजार आधारित सुधारों ने दक्षता, नवाचार और सेवा की गुणवत्ता को बढ़ाने में सकारात्मक भूमिका निभाई है।

इस अध्ययन का मुख्य निष्कर्ष यह है कि सुशासन का सबसे प्रभावी मॉडल राज्य और बाजार के संतुलित (Hybrid) समन्वय में निहित है। राज्य को नियामक, संरक्षक और सामाजिक न्याय सुनिश्चित करने वाली संस्था के रूप में कार्य करना चाहिए, जबकि बाजार को प्रतिस्पर्धा, नवाचार और दक्षता बढ़ाने का अवसर दिया जाना चाहिए। सुशासन तभी प्रभावी होगा जब पारदर्शिता, उत्तरदायित्व, तकनीकी नवाचार और नागरिक-केंद्रित प्रशासन को संस्थागत रूप से मजबूत किया जाए।

12. नीति-सुझाव

अध्ययन के आधार पर निम्नलिखित सुझाव प्रस्तुत किए जाते हैं—

i). **डिजिटल शासन का विस्तार:** सभी प्रमुख सार्वजनिक सेवाओं में डिजिटल प्लेटफ़ॉर्म, ऑनलाइन निगरानी तथा समयबद्ध सेवा वितरण को सुदृढ़ किया जाए।

ii). **प्रशासनिक विवेकाधिकार में कमी:** जहाँ संभव हो, नियमों को सरल बनाया जाए तथा निर्णय प्रक्रिया को अधिक पारदर्शी बनाया जाए।

iii). **प्रतिस्पर्धा को प्रोत्साहन:** जिन क्षेत्रों में सार्वजनिक हित प्रभावित नहीं होता, वहाँ स्वस्थ प्रतिस्पर्धा को बढ़ावा दिया जाए ताकि सेवा की गुणवत्ता और दक्षता में वृद्धि हो।

iv). **सार्वजनिक कल्याणकारी क्षेत्रों में राज्य की सक्रिय भूमिका:** स्वास्थ्य, शिक्षा, खाद्य सुरक्षा और सामाजिक सुरक्षा जैसे क्षेत्रों में राज्य का निवेश और नियमन मजबूत बना रहे।

v). **जवाबदेही तंत्र को सुदृढ़ करना:** सामाजिक अंकेक्षण (Social Audit), लोक शिकायत निवारण प्रणाली, सूचना का अधिकार तथा स्वतंत्र निगरानी संस्थाओं को अधिक प्रभावी बनाया जाए।

vi). **लक्षित सब्सिडी:** सार्वभौमिक सब्सिडी के स्थान पर प्रौद्योगिकी आधारित लक्षित सहायता को प्राथमिकता दी जाए ताकि संसाधनों का बेहतर उपयोग हो।

vii). **संस्थागत क्षमता का विकास:** लोक सेवकों के प्रशिक्षण, ई-ऑफिस, डेटा-आधारित निर्णय और प्रदर्शन मूल्यांकन प्रणाली को सुदृढ़ किया जाए।

viii). **भविष्य के शोध की दिशा:** भविष्य में विभिन्न राज्यों तथा क्षेत्रों (जैसे स्वास्थ्य, शिक्षा, कृषि और शहरी सेवाओं) का तुलनात्मक अध्ययन करके यह विश्लेषण किया जा सकता है कि विभिन्न संसाधन आवंटन मॉडल सुशासन को किस सीमा तक प्रभावित करते हैं।

संदर्भ सूची

1. Ackerman SR. *Corruption: A Study in Political Economy*. Academic Press; 1978.
2. Ackerman SR, Palifka BJ. *Corruption and Government: Causes, Consequences, and Reform*. 2nd ed. Cambridge University Press; 2016.
3. Hayek FA. The Use of Knowledge in Society. *American Economic Review*. 1945;35(4):519–530.
4. Hayek FA. *The Constitution of Liberty*. University of Chicago Press; 1960.
5. Klitgaard R. *Controlling Corruption*. University of California Press; 1988.
6. North DC. *Institutions, Institutional Change and Economic Performance*. Cambridge University Press; 1990.
7. Ostrom E. *Governing the Commons*. Cambridge University Press; 1990.
8. Sen A. *Development as Freedom*. Oxford University Press; 1999.
9. Smith A. *An Inquiry into the Nature and Causes of the Wealth of Nations*. MetaLibri; 1776/2007.
10. Weber M. *Economy and Society*. University of California Press; 1978.
11. World Bank. *Governance and Development*. World Bank; 1992.
12. World Bank. *Worldwide Governance Indicators*. 2023.
13. United Nations Development Programme (UNDP). *Governance for Sustainable Human Development*. 1997.
14. Organisation for Economic Co-operation and Development (OECD). *Government at a Glance*. 2021.
15. Transparency International. *Corruption Perceptions Index*. 2023.
16. द्वितीय प्रशासनिक सुधार आयोग (Second Administrative Reforms Commission). *Ethics in Governance*. भारत सरकार; 2007.
17. नीति आयोग। *भारत में सुशासन एवं प्रशासनिक सुधार संबंधी रिपोर्टें* विभिन्न वर्ष.
18. भारत सरकार। *Economic Survey of India*. विभिन्न वर्ष.
19. भारत सरकार। *National Food Security Act, 2013*.
20. भारत सरकार। *Direct Benefit Transfer Mission*. विभिन्न आधिकारिक दस्तावेज.
21. भारत सरकार। *Pradhan Mantri Bhartiya Janaushadhi Pariyojana*. आधिकारिक दिशा-निर्देश एवं वार्षिक रिपोर्टें.
22. भारत सरकार। *PAHAL (DBTL) Scheme से संबंधित आधिकारिक रिपोर्टें.*

23. Kaufmann D, Kraay A, Mastruzzi M. *Worldwide Governance Indicators: Methodology and Analytical Issues*. विभिन्न संस्करण.
24. Buchanan JM, Tullock G. *The Calculus of Consent*. University of Michigan Press; 1962.
25. Wilson W. The Study of Administration. *Political Science Quarterly*. 1887;2(2):197–222.